P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11*(Part-1) February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

किन्नर समुदाय का सामाजिक प्रतिबिम्ब

राजेश स्वामी
प्राचार्या,
सरदार वल्लभ भाई पटेल पी0 जी0 महाविद्यालय,
भादरा, हनुमानगढ़, राजस्थान

सारांश

जहाँ तक सम्भव हो सका है वहाँ तक साहित्यकार ने साहित्य से जुड़े सभी पहलूओं को छुआ है फिर भी कुछ ऐसे विषय है जहाँ प्राचीन लेखकों ने अपना प्रसार नहीं किया है वे ही अनछुए पहलू आज कल लेखकों की कलम का विषय बने हुए हैं। साहित्य में नारी विमर्श एवं पुरूष विमर्श के अलावा एक लिंग विमर्श है जो ना नारी विमर्श का विषय हैं और ना ही पुरूष विमर्श का। जिसे साहित्यकारों ने किन्नर विमर्श का नाम दिया है। हम तन से तो 21 वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं परन्तु मन से आज भी इसी मध्यकालीन संकीर्णता में जी रहे हैं। हमारा मन मस्तिक दोनों इन संकीर्णताओं की बेड़ियों से जकड़े हुए हैं मगर ऐसे में उस तृतीय वर्ग का क्या जिसे समाज किन्नरी, हिंजड़ा, खोजवा, शिखण्डी आदि नामों से सम्बोधित करता है। इस वर्ग की झोली में आई है तो असीम वेदना और निस्सीम पीड़ा। किन्नर विमर्श को समाज की वैचारिकी स्वीकारने में हिचकिचा रही है जिसके कारण यह विमर्श अपनी अपरिपक्व अवस्था में ही है।

मुख्य शब्द : किन्नर वैचारिकी, संकीर्णता, थर्ड जेंडर, अनुवांशिक।

प्रस्तावना

उत्तर – आधुनिक समय में लोगों की दृष्ठि हाशियाकृत समुदायों पर पड़ी है तो दलित विमर्श, नारी विमर्श, वृद्ध विमर्श, विकंलाग विमर्श के साथ–2 अब किन्नरों पर भी ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है परिणामस्वरूप किन्नर विमर्श भी उभरकर सामने आया है।

इस बात में तनिक भी सन्देह नही है कि समाज में किन्नर सदा से उपस्थित रहे हैं किन्तु उनकी उपस्थिति केन्द्र की अपेक्षा परिधि पर ही स्थित रही है जहाँ तक की कई बार इन किन्नरों को अपना जीवन एक अभिषाप सा प्रतीत होता है परिधि पर धकेला गया यह किन्नर समुदाय अपने आप में इस समाज से उपेक्षित विशाल समुदाय है यह किन्नर विमर्श इस उपेक्षित समुदाय की नई व्याख्या करने वाला विमर्श है जैसा कि पहले कहा गया है कि यह किन्नर समुदाय समाज में उपस्थित तो हमेशा से रहा है परन्तु फिर भी समाज से उपेक्षित और त्यागा हुआ ही रहा है।

वे क्या कारण रहे हैं जिनके चलते इस समुदाय को पारिवारिक अनुष्ठानों में आशीष देने का कार्य सौंपा गया है, शिक्षा से इनको वंचित रखा गया नौकरियों में इनको अधिकार नहीं दिया गया। इसका जवाब अगर जानना चाहें तो उत्तर मिलेगा की हमारा सभ्य समाज चाहता है कि इन किन्नरों के लिए आशीष बाँटने के अलावा अन्य कोई कार्य निर्धारत न हो वरना ये समाज से मान्यता प्राप्त दोनों वर्गों (स्त्री व पुरूष) के बराबर आ बैठेंगे जो सभ्य समाज को कत्तई मन्जूर नहीं ।

अध्ययन का उद्देश्य

माना जाता है कि इस वर्ग का आशीर्वाद अनुवांशिक समृद्धि लाता है तो फिर समाज का कोई भी व्यक्ति उनके जैसे जीवन की आकांक्षा क्यों नहीं करता है वर्तमान में किन्नरों को न केवल मतदान का अधिकार दिया जा रहा है बल्कि राजनीति एवं चुनाव में भी उन्हे भाग लेने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है। किन्नर विमर्श एक आन्दोलन की तरह प्रभावी होकर जन–जन की सोच को भी प्रभावित कर रहा है।

साहित्यावलोकन

हिन्दी साहित्य में किन्नर विमर्श की शुरूआत सर्वप्रथम नीरजा माधव के उपन्यास 'यमदीप' (2009) में देखने को मिलती है इसके प्रकाशन के साथ ही लेखक वर्ग की दृष्ठि इस किन्नर वर्ग पर पड़ी । हमारे समाज में लिंग निर्धारण की प्रक्रिया के तहत स्त्री व पुरूष स्वभाव को ही मान्यता प्रदान की जाती है इस दृष्टिकोण से किन्नर वर्ग को समाज में स्वतः ही अव्यावहारिक मान लिया जाता है। परिवार में जन्म लेने वाला उभयलिंगी बालक हर परिस्थिति से जुझ

कर भी क्यों अपने परिवार के द्वारा त्याज्य हो जाता है इस त्याग में भी समाज का ही हाथ है क्योंकि परिवार के द्वारा पालन–पोषण की चाह होने पर भी समाज उसमें रूकावट बनता है।नीरजा माधव के उपन्यास 'यमदीप' में मुख्यपात्र नन्दरानी के माता–पिता उसे पास रखकर पढ़ाना चाहते हैं परन्तु महताब गुरू उसके माता–पिता को समझाते है कि "माताजी किसी स्कूल में आज तक हिंजड़ों को पढ़ते देखा है, किसी कुर्सी पर बैठा देखा है ? पुलिस, मास्टरी, कलैक्टरी में किसी में भी अरे! इनकी दुनियाँ यही है माताजी"[1] नन्दरानी से नाजबीबी बनी किन्नर और उसके साथियों नें एक पागल औरत का प्रसव करवाया और औरत के मर जाने पर उसके नवजात शिशु को भी जिसे समाज ने नहीं अपनाया उसे अपनाने को भी तैयार होते हैं। लोगों की संवेदनशून्यता को ललकारते हुए हिंजड़े कहते है– "अरे हम हिंजड़े है, हिंजड़े ..... इंसान है क्या मुहँ फेर लें।"[2] बच्चे को अपनी बस्ती में ले जाते हैं। किन्नरों की सामाजिक भूमिका क्या है इस ओर हमारा ध्यान नीरजा माधव केन्द्रित करती है "उत्पादन और उपयोगिता की राजनीति का प्रश्न इस उपन्यास काकेन्द्र बिन्दु है जहाँ जैविक भिन्नता समाज में इनके अस्तित्व को अस्वीकार्य बना देती है।"[3]

साहित्यकार महेन्द्र भीष्म ने अपने उपन्यास 'किन्नर कथा' में किन्नर वर्ग की तकलीफ उनकी उपेक्षा उनकी व्यथा को परख कर पैरवी की है हमारी संस्कृति वसुधैव कुटुम्बकम की अवधारणा पर आधारित होकर भी इस गैर– बराबरी की विचारधारा को क्यों सहेजे हुए है ? आधुनिक समय में तो स्थिति इतनी भयावह हो गई है कि किन्नर मांगलिक अवसरों पर थिरकते कम और भीख मांगते ज्यादा नजर आते हैं अपनी गिरती आर्थिक सामाजिक स्थिति के कारण ये देह व्यापार के दलदल में गिरने को विवश हो जाते हैं। क्योंकि सभ्य समाज की आत्मीयता इनके पास नहीं है।

"कंगन है मेरे हाथ में पर कलाई में ताकत है
पुरूषों से अधिक
आवाज है मेरी पुरूषों सी पर मन मेरा कोमल
है पुरूषों से अधिक
परपूछता अस्तित्व मेरा तु कौन है ?"[4]

महेन्द्र भीष्म के उपन्यास "किन्नर कथा" की नायिका सोना उर्फ चन्दा अत्यन्त सुन्दर है ओर मात्र उसकी कंठध्वनि ही उसके किन्नर होने को प्रमाणित करती है। किन्नर देह होने के कारण सोना राजघराने में पैदा होने के बाद भी हेय जीवन जीने को विवश कर दी जाती है और इसी के साथ उसका अधूरी देह होने की पीड़ा, सामाजिक उपेक्षा, पारम्परिक व पारस्परिक संघर्ष, अवसाद, विद्वेश जैसे नकारात्मक भावों का सफर शुरू हो जाता है किन्नरों की इस स्थिति से उन्हें उबारने के लिए अदालत ने उनकी मांग को स्वीकार किया है जो लम्बे समय से निरन्तर जारी रही है मगर अदालत के फैसले के साथ ही हमारा काम समाप्त नहीं हो जाता है इस की गई पहल को समाज के माध्यम से ही आगे ले जाया जायेगा। जिसका बीड़ा समाज सुधारकों के साथ प्रत्येक नागरिक को उठाना है। हम वर्तमान युग में 21वीं सदी के वैज्ञानिक युग में जी रहे है फिर भी पुरातन धारणाएँ हमारा पीछा नहीं छोड़ रही है।

किन्नरों की पीड़ा की कुषल अभिव्यक्ति निर्मला भुराडिया के उपन्यास 'गुलाम मण्डी' में हुई है। लेखिका ने इस गहन संवेदना को गुलामी का दंश झेलते हुए व्यक्त किया है। जहाँ तिरस्कृत वर्ग किन्नरों की समस्या ओर मानव तस्करी का भयावह चेहरा उद्घाटित होता है। 'गुलाम मण्डी' उपन्यास के माध्यम से उस सच को बड़ी बारिकी से उघाड़ने की चेष्टा की गई है जिसे बार–बार दबाने की कोशिश की गई थी।

लेखिका ने अपने अनुभवों को उपन्यास के माध्यम से व्यक्त करते हुए लिखा है– "प्रोजेक्ट आधारित उपन्यासों से एकदम अलग यह उपन्यास रचनाकार के मूल सरोकारों से सीधा जुड़ा हुआ है, जो पूरी संजीदगी से एक इंसान को इंसान मानने की वकालत करता है ..... फिर चाहे वह एक मजदूर स्त्री हो या समाज का तिरस्कार झेलने को मजबूर किन्नर"[5] मानव जाति के इस वर्ग की पीड़ाएँ तद्जनित नहीं अपितु किसी क्रुर परिहास का ही परिणाम प्रतीत होती है। लेखिका लिखती है "बचपन से देखती आयी हूँ की उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को, जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें इनका क्या दोश ? ये क्यों हमेशा त्यागे गए, सताए गए और अपमान के भागी बने ? इन्हें कई नामों से पुकारा गया मगर तिरस्कार के साथ ही क्यों ? आखिर ये बाकी इन्सानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं ?"[6]

इसी कड़ी में अगला उपन्यास प्रदीप सौरभ की 'तीसरी ताली' है यह तीसरी ताली वह है जिसे समाज में मान्यता नहीं मिली। इस उपन्यास में आनन्दी आंटी और गौतम साहब के घर बच्चा होने पर खुशी के स्थान पर षोक मनाया जाता है। ऐसे बच्चे के पैदा होने का केवल अन्त आत्महत्या के रूप में प्रस्तुत कर किन्नर जीवन का एक ओर सच समाज के सामने प्रकाशित किया है। आर्थिक विषमता के कारण इन किन्नरों को भीख तक मांगनी पड़ती है। यथा "मै मर्द रहूँ, औरत रहूँ या फिर हिंजड़ा बन जाँऊ, इसमें किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता, पेट की आग तो न जाने बड़े–बड़ों को क्या–क्या बना देती है"[7] यहाँ किन्नरों की उस सच्चाई को उजागर किया गया है जिसमें सभ्य समाज कभी झांकना तक नहीं चाहता है।

वर्तमान बाजारी व्यवस्था में चित्रा मुद्गल में अपने उपन्यास 'नाला सोपारा पोस्ट बॉक्स न. 203' में यह दिखाने का प्रयास किया हैं कि कैसे लोग अपने पुत्रों का जननांग विकलांगता के कारण अपने घर–परिवार से काटकर अलग अभिशप्त जीवन जीने के लिए इन्हें किन्नरों के हवाले कर देते हैं जैसे यही उनकी नियति है। सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक स्तर पर न जाने इसे कितने रूपों में शोषित होना पड़ता है। समाज व राजनीति की मुख्यधारा से 'थर्ड जेंडर' को काटकर इस कदर हटाया गया है कि आत्मसम्मान की पहचान उसे सताने लगी और वह अपने वजूद को प्राप्त करने के लिए संघर्शरत है। 'नाला सोपारा' के माध्यम से किन्नर वर्ग के त्रासद यथार्थ को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया गया

है जो समाज की पुरातनपंथी मानसिकता के यथार्थ की पोल खोलता है। उपन्यास नायक विनोद उर्फ बिन्नी के शब्दों में "जिस जिन्दगी का हिस्सा अचानक मुझे बना दिया गया वह इतना आकस्मिक और अविश्वसनीय था कि मेरा किशोर मन उसे किसी भी रूप में पचा पाने में असमर्थ था। मनुष्य के दो ही रूप मैंने आजतक देखें थे इस तीसरे रूप से मैं परिचित तो था लेकिन मैं उसे पहले रूप का ही एक अलग हिस्सा मानता था।"[8]

निष्कर्ष

इस किन्नर वर्ग को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का कार्य अभी बाकी है जिसे शिक्षा और संवेदनशीलता के माध्यम से ही जोड़ना सम्भव है। समाज ने इंसानियत के जिस तकाजे पर इस समुदाय को मनुष्यता की मुख्यधारा से अलग किया है वह मनुष्यता सभ्य समाज की अपेक्षा इनमें अधिक दिखाई देती है।

इस किन्नर समुदाय की तृतीय लिंग (थर्ड जेंडर) के रूप में पहचान निश्चित करने की दिशा में सरकार द्वारा भी कदम उठाए गए हैं परन्तु सामाजिक स्तर पर व्यावहारिक रूपसे इस पहचान को सफल स्थान प्रदान करने में समय लग सकता है क्योंकि हमारे समाज का बड़ा हिस्सा पूर्वाग्रहों से ग्रसित होने के कारण इन्हें तिरस्कार की दृष्ठि से देखता है। यही कारण है कि इस वर्ग के संघर्ष का अन्त नहीं हो रहा है समाज के विवादित मुद्दे अक्सर विमर्श का रूप धारण कर लेते हैं परन्तु जहाँ इनका उल्लेख हुआ है वह एक हल्के व्यंग्य के रूप में है। आज वह समय आ गया है जहाँ हाशिये के विषयकेन्द्र में आ चुके हैं तो फिर इस किन्नर समुदाय को भी मुख्यधारा से जोड़कर उस पर खुलकर चर्चा होनी चाहिए। इसलिए वर्तमान में कई भाषाओं की विविध विधाओं में इस विषय पर लेखन का प्रयास जारी रखना आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *यमदीप – नीरजा माधव (सामयिक प्रकाशन)*
2. *यमदीप – नीरजा माधव (सामयिक प्रकाशन)*
3. *हिन्दी उपन्यास और थर्ड जेंडर*
4. *मैं क्यों नहीं ? पारूमदन नाईक – पृ0 165*
5. *गुलाम मण्डी– निर्मला भुराडिया*
6. *गुलाम मण्डी– निर्मला भुराडिया*
7. *तीसरी ताली – प्रदीप सौरभ*
8. *नाला सोपारा पोस्ट बॉक्स न0 203 – चित्रा मुद्गल*